Shodhaamrit, Vol.-3; Issue-1 (Jan.-March) 2026 : Page No.-286-288

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-4.0
Vol.-3; issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No- 286-288
©2026 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :

1. सुजाता कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

2. डॉ. त्रिविक्रम नारायण सिंह
प्राध्यापक, विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग, बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

Corresponding Author :

सुजाता कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

रेणु की कहानियों में आंचलिकता

रेणु जी के उपन्यासों की भाँति कहानियाँ भी आंचलिकता के सांस्कृतिक तत्वों से ओत-प्रोत हैं। जिस प्रकार से वे सर्वश्रेष्ठ आंचलिक उपन्यासकार हैं, उसी प्रकार वे अनुपम आंचलिक कहानीकार भी हैं। रेणु की कहानियों का अंचल वही चिर परिचित पूर्णिया अंचल है, जहाँ की स्थानीय विशेषता उनकी कहानियों में सर्वथा नूतन शिल्प-वैभव लेकर अवतरित हुई है। रेणु की आंचलिकता इतनी सजग और सचेष्ट है कि इसमें युगीन प्रश्न और प्रासंगिक समस्याएँ व्यापक रूप से अभिव्यक्त हुई है। इसी प्रकार रेणु जब अपनी कहानियों में आंचलिकता के साथ ही उसमें जब सांस्कृतिक स्पर्श देते हैं तो उनका अर्थ यह नहीं होता कि वे जड़ परम्पराओं से हुए हैं, अपितु उनकी गतिशील ऐतिहासिक दृष्टि उनमें बराबर बनी रहती है, जिसके कारण रेणु की कहानियों में प्रायः सांस्कृतिक परंपरा और बदलते हुए समय और परिवेश की नयी आर्थिक और सामाजिक स्थितियों की टकराहट होती चलती है। इन्हीं वजहों से रेणु की कहानियां संस्कृति की स्वीकृति का स्वर बनकर नहीं बल्कि संघर्ष का आयाम बनकर प्रस्तुत होती है। उनकी कहानियों में विकासात्मकता के साथ-साथ रागात्मकता के तत्त्व भी दीखते हैं तथा उनकी बहुत सी कहानियों में विद्रोहधर्मिता भी स्पष्ट दिखाई पड़ती है।

"अज्ञेय ने रेणु को धरती का धनी कहा है। यानि कि उनके पास अधिक बड़ी धरती थी, बहुत धरती थी, ठोस धरती थी, जीती जागती धरती थी। यह देखना सचमुच कितना दिलचस्प है कि इसके बावजूद रेणु को हम आंचलिक कथाकार कहते हैं और मानते हैं कि उन्होंने बिहार के एक छोटे से अंचल पूर्णिया-अररिया के बारे में लेखन किया है।"[1]

रेणु का पहला कहानी-संग्रह 'ठुमरी' सन 1959 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की दस कहानियों में से छः कहानियां आंचलिक हैं, जिनमें समसामयिक राष्ट्रीय और सामाजिक परिवर्तन न होकर सांस्कृतिक स्वरों के संघर्ष की गाथाएँ हैं, कुछ कहानियों में आंचलिकता का आग्रह इतना प्रबल है जैसे लगता है किसी सनातन कोमल स्वर कहीं मुखर और कहीं हँसता, कहीं टूटकर छटपटाता

चित्रांकित है।

रसप्रिया में मोहना की राह देखता पंचकौड़ी मिरदंगिया सोच रहा है, जेठ की चढ़ती दोपहरी में खेतों में काम करने वाले भी अब गीत नहीं गाते हैं। और तो और कुछ दिनों के बाद कोयल भी कूकना भूल जाएगी क्या? ऐसी दोपहरी में कैसे चुपचाप काम किया जाता है। पाँच साल पहले तक लोगों के दिल में हुलास बाकी था। पंचकौड़ी मिरदंगिया के इस सोच में अनुरंजनकारी सांस्कृतिक जीवन मूल्यों के ह्रास की छाटपटाहट है। जो गीत और नृत्य सांस्कृतिक-सामाजिक जीवन को जीवंत रखता था, आज गाँव से विदा हो रहा है तथा कला आर्थिक मूल्यों में दम तोड़ रहा है। पंचकौड़ी मिरदंगिया पुराने रसपिरिया नमक सांस्कृतिक ग्राम गायन का सिद्ध गायक है। जो गले में मृदंग लटकाकर बजाते हुए गाता था, नाचता था। पंचकौड़ी मिरदंगिया का सम्पूर्ण सोच एक आंचलिक कला की गिरावट के इर्द-गिर्द है, क्योंकि वह देखता है कि मिथिलांचल में विदापत गीत (रसपिरिया) गाने वालों की कोई इज्जत नहीं है। नृत्य-गीत का स्वस्थ अनुरंजनकारी वातावरण समाप्त होता चला जा रहा है। गीत की भांति विदापत नृत्य भी उठ गया। अब उसकी कोई चर्चा नहीं है। "रसप्रिया कहानी में बैलों को बार-बार हाँके जाने के बावजूद वे पटसन के खेत की ओर दौड़ते हैं क्योंकि पटसन के हरे-हरे पौंधों की गंध उनको खींच रही।"[2]

फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी 'रसप्रिया' में जो आंचलिक तत्व हैं, वे काफी स्पष्ट रूप में उभरे हुए हैं। अपने उपन्यासों की भाँति कलाकार रेणु ने इनमें भी पूर्णिया जिले के मिथिलांचल को उठाया है जहाँ विद्यापति के गीत 'रसप्रिया' के रूप में गाये जाते हैं। इस प्रकार 'रसप्रिया' एक विशेष अंचल की विशेष सांस्कृतिक पहचान है। इसके अलावा क्षेत्रीय रीति-रिवाजों और जन-विश्वासों को भी कथाकार ने प्रस्तुत किया है। पंचकौड़ी मृदंगिया गाँव का अंतिम कलाकार है जो 'रसप्रिया' गाता है। कला के प्रति उसके भीतर भावुक भाव भरा हुआ है। अपनी संतुष्टि के अतिरिक्त सामाजिक योग के लिए उसकी हार्दिक अभिलाषा है कि उसे एक योग्य उत्तराधिकारी मिले। उसकी दृष्टि मोहना पर पड़ती है जिसमें इस कला के प्रति यथा सहज ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा है।

इसी अवसर पर कथाकार दो प्रकार की स्मृतियों की टकराहट का चित्रण करता है। मृदंगिया सोचता है कि मोहना 'रसप्रिया' का उत्तम कलाकार है जो कला, धर्म, संस्कृति और रस-भाव की रक्षा करेगा। दूसरी ओर मोहना के अभिभावक सोचते हैं कि यदि वह रसप्रिया का नर्तक और गायक बन जाएगा तो रोजी-रोटी के उपयोगी साधनों से सर्वथा रहित होकर आवारा और निकम्मा बनकर सदैव घूमता रह जाएगा।

इस प्रकार इस कहानी की आधुनिक संवेदना विभिन्न कोणों से पाठकों के मन को झकझोर देती है। एक सवाल मन में उठता है कि ऐसा अंतिम कलाकार दम तोड़ लेगा और समाज से कला भाव अंतिम रूप में विदा ले लेगी। "रेणु की कहानी 'रसप्रिया' का नायक जिसका मूल नाम 'पंचकौड़ी' है, लोगों को याद भी नहीं है। मृदंग बजाने के कारण 'मृदंगिया' के नाम से ही अपने इलाके में जाना जाता है। आज भी अगर यह कैरेक्टर रंगकर्मियों को अपने करीब का लगता है तो इसका एक कारण यह भी है कि कहीं-न-कहीं रंगमंच से जुड़ा कलाकार अपने को मृदंगिया से 'आईडेंटिफाई' (Identify) करता है। मृदंगिया के खेल-तमाशा में जो उतार-चढ़ाव आता है, आज का रंगमंच इससे वाकिफ है। विदापत गाने के प्रति लोगों की धारणा कितनी निम्न हो गयी है, सम्मान की नज़र से देखा नहीं जाता है, यह चिंता मृदंगिया को ही नहीं, आज भी जो कलाकार किसी लोक-रंग से जुड़ा है, उसकी चिंता का विषय है।"[3]

'रसप्रिया' के बाद इस संकलन की अन्य आंचलिक कहानियों में 'तीसरी कसम' अर्थात् 'मारे गए गुलफाम' तथा 'लाल पान की बेगम' आदि को लिया जा सकता है क्योंकि इन दोनों कहानियों में बैलगाड़ियों पर बैठकर एक विशेष प्रकार की रसमुग्धता और उत्साह के साथ नाच-नौटंकी देखने जाना एक विशेष प्रकार के अंचल चित्र को गतिशीलता के साथ प्रस्तुत करता है और इस यात्रा में पाठकों को अपना साझीदार बना लेता है। इतना ही नहीं 'तीसरी कसम' पर एक फिल्म भी बन चुकी है। एक गाड़ीवान के भीतर सोयी हुई रोमांटिक मनःस्थिति और हीरामन और हीराबाई की संगति-विसंगति कहानी के आंचलिक परिवेश को ग्रामीण संस्कृति के

स्वाद से ओत-प्रोत कर देती है। वास्तव में यह आंचलिक गीत की भंगिमा और आधुनिक शिल्प रेणु की विशेषता है। इन्हीं विशेषताओं के साथ ही पाठक 'लाल पान की बेगम' की मनोदशा का सहभागी बनता है और उसे लगता है कि लोगों के मन में लालसाएँ हैं, आशाएँ हैं और वे पूरे भी होते हैं। इस कहानी में लोग एक-दूसरे के साथ लड़ते भी हैं और सुलह भी करते हैं और पति-पत्नी सुखद जीवन की कामना भी करते हैं। 'लाल पान की बेगम' का गाँव कोई नया गाँव नहीं है, वह पुराना सनातन गाँव है जहाँ बिरजू की माँ बलरामपुर में नाच देखने बैलगाड़ी पर बैठकर जायेगी। इस वातावरण में उस गाँव की ईर्ष्यालु पड़ोसिनों का चरित्र जिस प्रकार उभरता है, यह रेणु का आंचलिक सूक्ष्म निरीक्षण पाठकों को अभिभूत कर देता है। "रेणु की कहानियाँ अपने आंचलिक आकर्षण से बाँधे रहती है। उसमें एक रसधार सदैव प्रवाहित होती रहती है।" उस रस को बढ़ाते हुए रेणु गीत भी गाने लगते हैं। 'तीसरी कसम' में तो कई गीत हैं। 'उच्चाटन' में भी रामविलास के मन में शहर लौटने को लेकर चार दिनों में हमेशा एक विदाई गीत-समदाउन गूँजता रहता है। उनकी भाषा में देशज संवेदना का ठाट देखा जा सकता है। 'मरकट', 'महाजन', 'बामन', 'बनिया', 'सिरगनेश', 'गिदकारी', 'मरी', 'बिसमिल' आदि शब्द अन्य आंचलिक शब्दों से मिलकर कहानी की भाषा को गति देते हैं।"[4]

आंचलिक कहानी के रूप में जब बिरजू की माँ सभी महिलाओं के साथ सज-संवरकर नाच देखने जाती है, तब बिरजू की माँ सब गिले-शिकवे भूलकर सभी स्त्रियों को बैलगाड़ी में बिठाती है और मखनी फुआ घर की रखवाली करती है। बिरजू की माँ उसे समय काटने के लिए तम्बाकू दे जाती है। "जब नाच देखने की बिरजू की माँ के मन की अभिलाषा पूरी होने लगती है तो उसके मन से बैर-भाव और गिला-शिकवा भी दूर हो जाता है। इस कहानी में ताश के 52 पत्तों में 'लाल पान की बेगम' एक सुन्दर, आकर्षक, कुशल, जिम्मेदार, गृहिणी, स्नेहमयी माँ, संघर्ष के साथ समन्वय कर चलने वाली स्त्री के प्रतीक रूप में प्रयुक्त हुई है। सचमुच यह प्रतीक बिरजू की माँ के चरित्र में फलीभूत हुआ है। इस कहानी को पढ़ते हुए पाठकों को ऐसा प्रतीत होता है कि वे कहानी को पढ़ नहीं रहे हैं, बल्कि देख रहे हैं। नामवर सिंह ने रेणु के बारे में सच ही कहा है कि "रेणु कलम से कैमरे का काम लेने वाले रचनाकार हैं।"[5]

इस संकलन की दो और कहानियों की चर्चा आवश्यक है। 'सिरपंचमी का सगुन' में औरत के कहने पर कालू लुहार नादिहन्द किसान सिंघाय के हल का फाल टेढ़ा कर देता है ताकि उसका सिरपंचमी का सगुन बिगड़ जाए। सिंघाय की औरत उसे रेलवे मिस्त्री से सीधा करा लाती है और उसके बाद सिंघाय और कालू के बीच समझौता भी होता है। इस कहानी का तात्विक मर्म अंचल विशेष और उनके सांस्कृतिक रीति-रिवाजों से जुड़े हुए हैं। हमारे यहाँ संकलित अनेक कहानियों में कला और कलाकार की गिरावट के प्रति जो पीड़ा अभिव्यक्त हुई है, वह रस संक्रमण उनकी कहानी 'भित्तिचित्र की मयूरी' में उभरती हुई दृष्टिगोचर होती है। रेणु की कथा-रचनाएँ अपने स्थानीय वैशिष्ट्य के कारण आंचलिक कही जाती हैं और वे जितनी आंचलिक हैं उतनी ही राष्ट्रीय।

संदर्भ :

1. फणीश्वरनाथ रेणु सृजन और व्यक्तित्व, डॉ0 छोटेलाल बहरदार और डॉ0 रामनरेश भक्त, पृष्ठ सं0—9.
2. रेणु विशेषांक, अंक 16, माटी, नरेन्द्र पुण्डरीक, पृष्ठ सं0—108.
3. संवेद, मार्च 2021, फणीश्वर नाथ रेणु शताब्दी स्मरण, किशन कालजयी, पृष्ठ सं0—427.
4. मुक्तांचल पीयर रिव्यूड त्रैमासिक, डॉ0 मीरा सिन्हा, पृष्ठ सं0—170.
5. संवेद मार्च 2021, फणीश्वर नाथ रेणु शताब्दी स्मरण, किशन कालजयी, पृष्ठ सं0—319.

सहायक ग्रंथ :

6. रेणु रचनावली.

•